गांधी मार्ग

जुलाई-अगस्त 2025

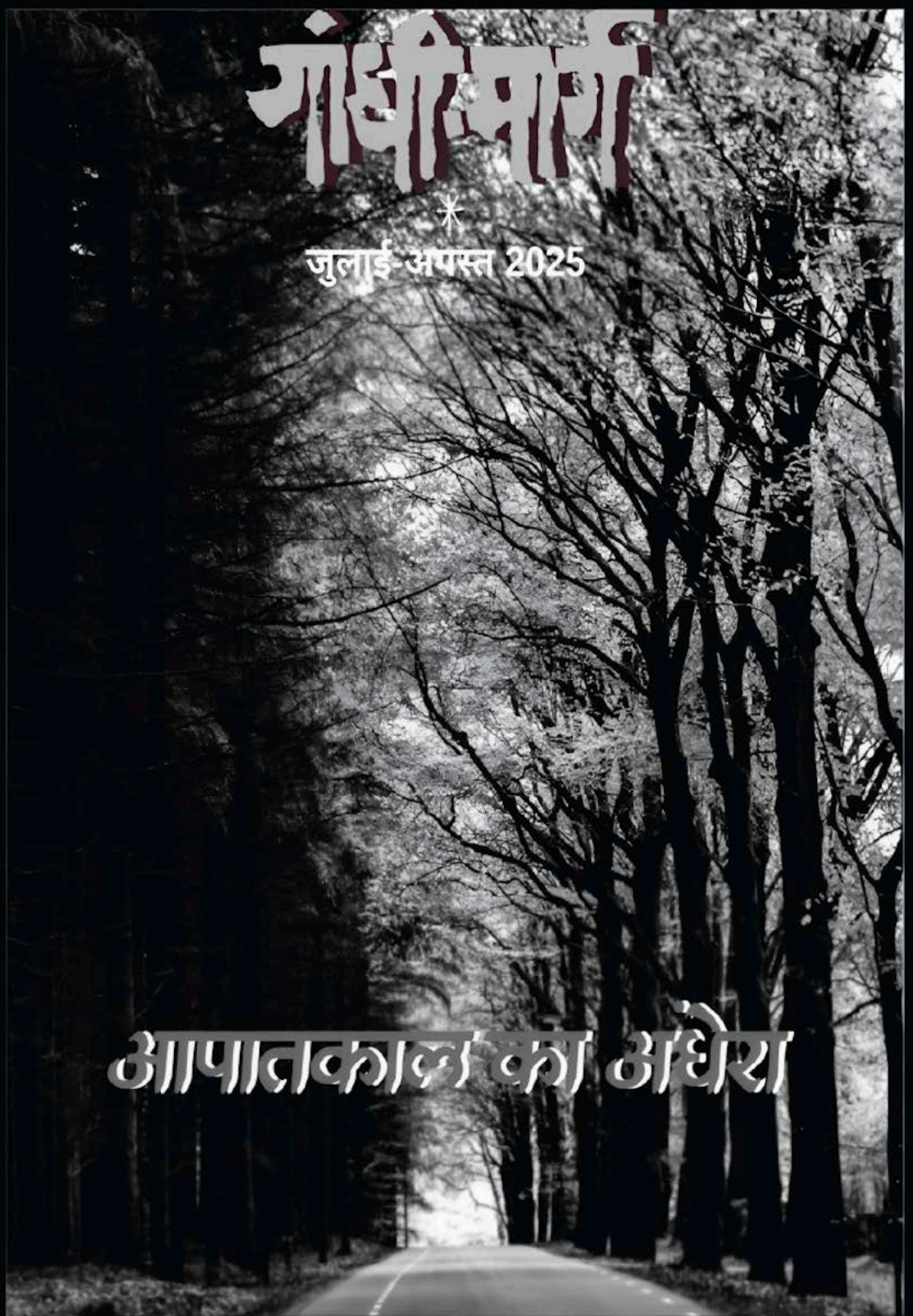

आपातकाल का अंधेरा

० महात्मा गांधी ० विनोबा ० जयप्रकाश नारायण ० श्रीनिवास ० अभय दुबे ० कुमार शुभमूर्ति ० क्रिस हेजेज

गांधी-मार्ग

अहिंसा-संस्कृति का द्वैमासिक
वर्ष 67, अंक 4, जुलाई-अगस्त 2025

गांधी शांति प्रतिष्ठान

1. आपातकाल का अंधेरा		3
2. संसार : गजा के अंतिम दिन	क्रिस हेजेज	37
3. कविता : सरहद पार	दिनेश लखनपाल	43
4. दस्तावेज : युद्ध की धधकती ज्वाला	महात्मा गांधी	44
5. विवेचना : अहिंसा के विकास की मंजिलें	विनोबा	52
6. पाथेय : खुदा हाफिज	दिलीप सिमियन	57
7. पत्र		62

आवरण : आपातकाल का अंधेरा सर्वग्रासी था. उसने संविधान को उसके ही जनक अवाम के खिलाफ खड़ा कर दिया था. 1947 में आई आजादी 1975 में खंडित हो गई थी. आज उस आपातकाल के 50 साल पूरे हो गए. लेकिन 50 साल पूरे होने पर सरकार, विपक्ष, मीडिया व स्वतंत्रचेता बौद्धिक जगत जो कह रहा है, जैसे कह रहा है उसमें उस अंधकार की संपूर्ण समझ व उसके विरोध की प्रतिबद्धता नहीं दिखाई व सुनाई देती है जिसकी बेहद जरूरत इसलिए है कि आजादी बार-बार खतरे में पड़ती है और बार-बार नई प्रतिबद्धता से उसका संरक्षण व संवर्धन करना पड़ता है. 1974-77 के दौर में लोकनायक जयप्रकाश के नेतृत्व में देश ने यही किया था. यह अंक उस आंदोलन की संपूर्णता को आंकने की एक कोशिश है. आवरण सज्जा हमेशा की तरह **कीर्ति** ने की है.

वार्षिक शुल्क : भारत में 200 रुपये, दो वर्ष के 350 रुपये, आजीवन-1000 रुपये (व्यक्तिगत), 2000 रुपये (संस्थागत), एक प्रति का मूल्य 20 रुपये, डाक खर्च निःशुल्क. दो माह तक न मिलने पर शिकायत लिखें. अपना शुल्क चेक, बैंक ड्राफ्ट, मनीऑर्डर द्वारा 'गांधी शांति प्रतिष्ठान' के नाम भेजें. ऑनलाइन भुगतान के लिए केनरा बैंक खाता नं. 0158101030392 IFSC CODE : CNRB 0000158.

संपादन : कुमार प्रशांत **प्रबंध :** मनोज कुमार झा **प्रसार :** भगवान सिंह

गांधी शांति प्रतिष्ठान, 223 दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-110002 के लिए अशोक कुमार द्वारा प्रकाशित
फोन : 011-2323 7491, 2323 7493, **Email:** gmhindi@gmail.com

मुद्रक : नीता प्रेस, 3574- गली जटवारा, नियर सबलोक क्लीनिक, दरियागंज, दिल्ली-110002, फोन नं. 8800646548

आपातकाल का अंधेरा

आपातकाल की 50वीं वर्षगांठ जिस छिछले और बेईमान इरादे से अभी-अभी मनाई गई, मीडिया ने जिस फूहड़ तरीके से इसे परोसा, उससे दूसरा कुछ पता चला हो कि न चला हो, यह तो पता चला ही कि संपूर्ण क्रांति आंदोलन, उसके मूल्य, उसका लक्ष्य, उसकी दिशा आदि की कोई समझ आज हमारी है नहीं जबकि इसी आंदोलन का मुकाबला करने में दिनोंदिन असमर्थ होती जा रही सरकार, नौकरशाही तथा धनपतियों की तिकड़ी ने आपातकाल का हथियार चलाया था.

आपातकाल अचानक घटी घटना नहीं थी, एक सशक्त जनांदोलन को कुचलने का सामूहिक उपक्रम था. यदि हम यह सच नहीं पहचानेंगे तो आपातकाल को सत्ता व विपक्ष के बीच की एक सतही रस्साकशी में बदल देंगे. यह इतिहास के साथ धोखा होगा.

गांधी राजनीतिक आजादी से आगे जिस संपूर्ण बदलाव की तरफ देश को ले जाना चाहते थे, आजादी के बाद वह प्रयाण बंद ही नहीं कर दिया गया बल्कि देश को उससे अनजान भी रखा गया. जयप्रकाश लोकतंत्र को उसके संपूर्ण आयामों के साथ जैसी संपूर्ण क्रांति में ढालना चाह रहे थे, आपातकाल द्वारा उसे अवरुद्ध ही नहीं कर दिया गया बल्कि देश की स्मृति से वे सारे तथ्य पोंछ देने की योजनाबद्ध कोशिश की गई कि जिनमें से क्रांति की समझ बनती है. इस कोशिश में आज अपने-अपने कारणों से कई जमातें शामिल हो गई हैं. मुखौटे अनेक हैं. यहां आपातकाल, जयप्रकाश की संपूर्ण क्रांति के असली मायने उजागर करने का एक आयोजन सुधी पाठकों के लिए

'मुख्य खलनायक' का बयान

० जयप्रकाश नारायण

25 जून 1975 की मध्यरात्रि में आपातकाल की घोषणा हुई और 26 जून 1975 की सुबह फूटते-न-फूटते जयप्रकाश की गांधी शांति प्रतिष्ठान परिसर से गिरफ्तारी हुई– आजाद भारत में उनकी पहली व आखिरी गिरफ्तारी! इसके ठीक 25 दिन बाद, चंडीगढ़ के पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च में नजरबंद जयप्रकाश ने प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को एक पत्र लिखा. यह पत्र आपातकाल की पोल खोलता है और संपूर्ण क्रांति आंदोलन को सही संदर्भ में रखता है. यह उस ऐतिहासिक पत्र का संपादित स्वरूप है–

प्रिय प्रधानमंत्री

चंडीगढ़
21 जुलाई, 1975

जिन बातों को आप बार-बार दोहराती रहती हैं, मेरे विचार में उनका सार यह है : 1. सरकार को पंगु बना देने के लिए एक षड्यंत्र रचा गया था, और 2. एक व्यक्ति फौज वालों और पुलिस वालों के बीच असंतोष फैलाने की कोशिश कर रहा था. अपनी इन दो मुख्य बातों के अलावा आप दूसरी भी कुछ छोटी-मोटी बातें दोहराती रही हैं. बात-बात में आप अपने कुछ दूसरे सूत्रों का भी उच्चारण करती रही हैं जैसे, लोकतंत्र की अपेक्षा राष्ट्र अधिक महत्त्व का है; समाजवादी लोकतंत्र भारत के लिए उपयुक्त हो सकेगा या नहीं, आदि-आदि.

चूंकि इस मामले में मैं ही 'मुख्य खलनायक' करार दिया गया हूं, इसलिए थोड़ी स्पष्टता किए देता हूं. आप जिस तरह सोच-समझकर झूठी बातें प्रचारित करती हैं और तथ्यों को तोड़-मरोड़कर विकृत रूप में प्रस्तुत

करती हैं, उसे देखते हुए आपको मेरी इन बातों में कोई दिलचस्पी नहीं होगी, फिर भी यह सोचकर कि कम-से-कम सच्चाई का कहीं उल्लेख तो हो ही जाना चाहिए, मैं अपनी बात लिख रहा हूं.

जहां तक आपकी सरकार को पंगु बना देने के षड्यंत्र की बात है, आप खुद जानती हैं कि ऐसा कोई षड्यंत्र था ही नहीं. इस विषय की हकीकतें मैं नीचे दे रहा हूं.

भारत के सब राज्यों में से अकेले एक बिहार राज्य ही था कि जहां जनांदोलन चल रहा था. वहां भी, जैसा कि आपके मुख्यमंत्री के कई बयानों में कहा गया है, अगर कोई आंदोलन कभी था, तो वह भी बहुत पहले ही चरमराकर खत्म हो चुका था. अगर आपके सर्वव्यापी खुफिया-विभाग ने आपको सही जानकारी दी होगी, तो आपको पता चलता ही होगा कि दरअसल आंदोलन बराबर फैलता जा रहा था, और वह दूर-दराज के देहाती इलाकों तक पहुंच रहा था. मेरी गिरफ्तारी के समय तक गांवों से लेकर प्रखंड के स्तर तक 'जनता-सरकारें' बनाई जा रही थीं. अपेक्षा यह थी कि आगे चलकर यह प्रक्रिया जिलों से लेकर राज्य स्तर तक जारी रहेगी.

यदि आपने इन 'जनता-सरकारों' के कार्यक्रमों को जानने-समझने की चिंता रखी होती, तो आपको पता चला होता कि इनके अधिकतर कार्यक्रम रचनात्मक थे. उदाहरण के लिए, सार्वजनिक वितरण-प्रणाली को नियमित और व्यवस्थित बनाना, प्रशासन के नीचे वाले स्तर पर भ्रष्टाचार को रोकना, भूमि-सुधार-संबंधी कानूनों का अमल करवाना, पुरानी परंपरागत प्रथा के अनुसार पंचों की मदद से आपस के झगड़ों को निबटाना और समझौते कराना, हरिजनों के साथ न्यायोचित व्यवहार की व्यवस्था खड़ी करना, तिलक-दहेज जैसी सामाजिक बुराइयों को रोकने की कोशिश करना, आदि-आदि. कल्पना की कैसी भी उड़ान के बाद भी इन कार्यक्रमों में आपको ऐसा एक कार्यक्रम नहीं मिलेगा, जो सरकार को उलटने वाला कहा जा सके. बेशक जहां 'जनता सरकार' का सुदृढ़ संगठन खड़ा हो सका था, वहां करबंदी आंदोलन शुरू किया गया था. जब आंदोलन अपनी चरम सीमा पर पहुंचा था, तब कुछ दिनों तक पिकेटिंग के जरिए सरकारी दफ्तरों का कामकाज रोकने के प्रयत्न हुए थे. पटना में विधानसभा के अधिवेशनों के दिनों में सदस्यों को अंदर जाने से रोकने के और उन्हें समझाकर, उनसे इस्तीफा मांगने के प्रयत्न शांतिपूर्वक किए गए थे. ये सारे ही कार्यक्रम सोच-समझकर सविनय-अवज्ञा की दृष्टि से शुरू किए गए थे, और इनके चलते पूरे प्रदेश के हजारों स्त्री-पुरुष जेल गए थे.

अगर यह कहा जाए कि ये सारे कार्यक्रम बिहार सरकार को पंगु बना

देने की कोशिश करने वाले कार्यक्रम थे, तो कहना होगा कि यह वैसी ही कोशिश थी जैसी स्वतंत्रता आंदोलन के चलते असहयोग और सत्याग्रह द्वारा ब्रिटिश सरकार को पंगु बनाने के लिए की गई थी. उस समय की सरकार तो ताकत के बल पर स्थापित सरकार थी, जबकि बिहार सरकार और बिहार की विधानसभा दोनों संविधान के अनुसार स्थापित संस्थाएं हैं. आपके खास सवालों में एक सवाल यह है कि चुनी गई सरकार को और विधानसभा को हट जाने के लिए कहने का किसी को क्या अधिकार है? संविधान के जाने-माने विशेषज्ञों और अन्य अधिकारी व्यक्तियों द्वारा इस सवाल का जवाब अनगिनत बार दिया जा चुका है. जवाब यह है कि लोकतंत्र में जनता को यह अधिकार है कि अगर कोई चुनी हुई सरकार कुशासन चलाती है, और भ्रष्टाचार करती है, तो वह उससे त्यागपत्र देने के लिए कह सकती है. राज्य की विधानसभा ऐसी सरकार का यदि समर्थन करती रहती है, तो उसे भी जाना ही चाहिए, जिससे जनता फिर अधिक अच्छे प्रतिनिधियों को चुन सके.

ऐसी स्थिति में, इस बात का निर्णय कैसे किया जाए कि लोग क्या चाहते हैं? निर्णय तो लोकतंत्र की साधारण रीति से ही हो सकता है. जहां तक बिहार का सवाल है, पटना में जो विशाल रैलियां निकलीं और जुलूस निकले, सारे राज्य के चुनाव-क्षेत्रों में जो हजारों सभाएं हुईं, लगातार तीन दिनों तक बिहार बंद रहा, 4 नवंबर को जो अविस्मरणीय घटनाएं घटीं और 18 नवंबर को पटना के गांधी मैदान में जो अभूतपूर्व सभा हुई, ये सब जनता की इच्छा को प्रकट करने वाले विश्वसनीय प्रमाण थे. इसकी तुलना में बिहार सरकार के पास और कांग्रेस के पास दिखाने को क्या था? श्री बरुआ की योजनानुसार 16 नवंबर को एक दरिद्र प्रदर्शन आयोजित किया गया था. विश्वसनीय सूत्रों के अनुसार इस पर 60 लाख रुपयों की अविश्वसनीय रकम खर्च की गई थी! अगर आपको हमारे उपरोक्त कार्यक्रम जनता की इच्छा के निर्णायक प्रमाण मालूम नहीं होते थे, तो मैंने बार-बार जनमत संग्रह की बात भी कही थी. लेकिन आप जनता के सामने जाने से डर रही थीं.

बिहार आंदोलन की इस चर्चा के चलते मैं यहां एक ऐसे महत्वपूर्ण मुद्दे का उल्लेख कर देना चाहता हूं, जिससे इस प्रकार के आंदोलन की राजनीति पर प्रकाश पड़ता है. बिहार के विद्यार्थियों ने अपना आंदोलन अचानक ही नहीं शुरू कर दिया था. अपने एक सम्मेलन में अपनी मांगें निश्चित करने के बाद वे मुख्यमंत्री और शिक्षामंत्री से मिले थे. उनके साथ विद्यार्थियों की कई बैठकें हुई थीं. लेकिन दुर्भाग्यवश बिहार की अयोग्य और भ्रष्ट सरकार ने विद्यार्थियों की बातों पर गंभीरतापूर्वक ध्यान नहीं दिया. इसके बाद विद्यार्थियों ने विधानसभा का घेराव किया. उस दिन की दुखद घटनाओं के कारण बिहार का आंदोलन सहसा शुरू हो

गया. फिर भी विद्यार्थियों ने न तो मंत्रिमंडल के त्यागपत्र की मांग की और न विधानसभा के विसर्जन की ही बात कही. अब बिहार में जगह-जगह गोलियां चलीं, लाठियां बरसीं और अंधाधुंध गिरफ्तारियां की गईं, तो कई हफ्तों बाद विद्यार्थियों की संघर्ष-समिति को विवश होकर अपनी मांगें पेश करनी पड़ीं और लक्ष्मण-रेखा को लांघने का निर्णय करना पड़ा.

बिहार सरकार को आमने-सामने बैठकर बातचीत के जरिए सवालों को हल करने का अवसर दिया गया था. विद्यार्थियों की एक भी मांग ऐसी नहीं थी कि जो अनुचित हो, या जिसे आपस की बातचीत के जरिए निबटाया न जा सके. लेकिन बिहार की सरकार ने संघर्ष का रास्ता ही पसंद किया, और दमन का बेमिसाल दौर चलाया. उत्तरप्रदेश में भी यही हुआ. दोनों प्रांतों में सरकारों ने आमने-सामने बैठकर आपस में बातचीत करने का रास्ता छोड़ दिया, और संघर्ष का रास्ता पसंद किया. यदि यह सब न हुआ तो, तो कोई आंदोलन हुआ ही न होता.

मेरे लिए यह एक पहेली ही है कि इन सरकारों ने समझदारी से काम क्यों नहीं लिया? मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि इसमें मुख्य बाधा भ्रष्टाचार की रही है. कारण कुछ भी क्यों न हो, स्पष्ट ही सरकारें अपने अंदर फैले भ्रष्टाचार को, खासतौर पर उच्च स्तर के अर्थात् मंत्रिमंडल स्तर के भ्रष्टाचार को रोकने में असमर्थ रही हैं. और, भ्रष्टाचार इस आंदोलन का केंद्र-बिंदु रहा है— खासतौर पर सरकार के और प्रशासन के उच्च स्तर पर चल रहा भ्रष्टाचार.

जो भी हो, बिहार को छोड़कर देश के दूसरे किसी भी राज्य में इस तरह का कोई आंदोलन नहीं था. अप्रैल में उत्तरप्रदेश में सत्याग्रह शुरू हुआ था, पर लोक आंदोलन बनने में उसे भी बहुत देर थी. दूसरे भी कुछ राज्यों में संघर्ष समितियों की रचना हो चुकी थी, किंतु कहीं भी व्यापक जन-आंदोलन की कोई संभावना दीखती नहीं थी. चूंकि लोकसभा के चुनाव नजदीक आ रहे थे, इसलिए राजनीतिक पक्षों का ध्यान सविनय अवज्ञा आंदोलन के बदले चुनावों की तरफ ही अधिक था. तो इस तरह सरकार को पंगु बना देने के षड्यंत्र की बात आपके मन की कल्पना का एक तुक्का-भर है, जिसके जरिए आप अपनी तानाशाही से भरी कार्रवाइयों को उचित ठहराना चाहती हैं.

दलील के लिए एक मिनट के लिए मैं यह मान भी लूं कि ऐसी कोई योजना थी, तो क्या आप प्रामाणिकतापूर्वक यह मानती हैं कि आपके भूतपूर्व साथी, भारत के पूर्व उपप्रधानमंत्री और कांग्रेस कार्यकारिणी के एक सदस्य श्री चंद्रशेखर भी उस षड्यंत्र के भागीदार थे? तो फिर उनको और उनके समान दूसरे कई लोगों को किसलिए गिरफ्तार किया गया था?

नहीं प्रिय प्रधानमंत्री जी, सरकार को पंगु बना देने की कोई योजना नहीं बनी